अंतरा-शब्दशक्ति

अकथ अनुभूतियाँ

काव्य संग्रह

डॉ सुकेशिनी दीक्षित

अकथ अनुभूतियाँ

(काव्य संग्रह)

डॉ. सुकेशिनी दीक्षित

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

ISBN- 978-93-86666-04-8

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन
मुख्य कार्यालय - १५ नेहरु चौक वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र) ४८१३३१
शाखा- एस-२०७, नवीन भवन, इंदौर प्रेस क्लब परिसर, इंदौर (म.प्र.) ४५२००१
दूरभाष- (कार्या.) ०७६३३-२५३१५९ (मो) ९४२४७६५२५९
अणुडाक- antrashabdshkti@gmail.com
अंतरताना- www.antrashabdshakti.com
प्रथम संस्करण २०१८ - डॉ. सुकेशिनी दीक्षित
मूल्य - ५५.०० रुपये
आवरण चित्र- संदीप सोनी, वारासिवनी
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी

Akath Anubhutiyan By Dr. Sukeshini dixit

वैधानिक चेतावनी - इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकापी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम से अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरुत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा शब्द शक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

अपनी बात

जगत की मग-धारा पर अग्रसर जीवन, विकट पहलुओं को आत्मसात करता हुआ, जीवन के प्रवाह में गतिशील कुछ समेटता हुआ सा, [संग्रह कर] अनुभूतियाँ को कहीं बंद दरवाजे के पार [उधर] संचय कर जब उन्हें द्वार के बाहर लाने की कोशिश करता है वह समग्र भाव देहली पर आकर स्वयं के अस्तित्व निर्माण में तल्लीन प्रतीत होते हैं। उन भाव आकारों को शब्द बद्ध करना दुष्कर सा प्रतीत होता है, किंतु अथक प्रयासों से आकार देते हुए किसी शब्द मूर्ति को गढ़ना रोमाँचक ही होता है, क्योंकि उसमें नवीनता एवं सौंदर्य आभासित होता है ऐसी ही अकथ भावानुभूति- संयोजन को मैंने, चेतना पटल की गुह्यता से बाहर लाकर उन समग्र भावों को एकत्रित कर उजाले में देखने की चेष्टा भर की है।

- डॉ सुकेशिनी दीक्षित

विषय सूची

1. संघर्ष	7
2. मानव	8
3. कहानी	9
4. वृत्तियां	10
5. ताम्रपात्र	11
6. अहसास	12
7. अर्चन	13
8. ज्ञात से अज्ञात	14
9. सत पर चल	15
10. माँ	16
11. मुक्ति	17
12. रेत की दीवारें	18
13. छवि	19
14. रूपांतरण	20
15. ऊर्जा	21
16. यात्रा	22
17. क्षण	23
18. वह	24
19. पाशविकता	25

20. जगत 26
21. सुमन 27
22. विरक्ति 28
23. पीड़ा 29
24. आज की राजनीति 30
25. रिश्तों की भटकन 31
26. सामीप्य 32

संघर्ष

संघर्ष के रूप का,
आरंभ मनुष्य की दीर्घता को,
अस्तित्व विहीन करने में,
निरुत्तर ही प्रतीत होता है,
क्योंकि मनुष्य का,
भय ही किसी रूप में,
उसका अपना प्रश्न बन,
उठ खड़ा होता है।।
एक हल्की सी,
आहट भी उसे डराकर.. तीक्ष्णता से,
कमजोरी के पैमाने पर,
पटक कर कहीं दूर... छिटक जाती है।
तपा हुआ सा मानव,
संसार को पार कर,
जीवन के अभिनंदन में संलग्न होकर,
संसार के अस्तित्व को,
नवीन रूप आकार में,
ढालने की अथक कोशिश करता हुआ सा,..
स्वयं को हारने नहीं देता, चिर काल तक..।

मानव

मनुष्य का विकास,
निरंतर उसे खींचता हुआ ले जा रहा,
एक व्यापक असीमित ऐसी दिशा की ओर,
जो उसे आकार दे रहा
असंवेदनशील,
कृत्रिम अमानवीय रूप का...
आज का मानव,
सामाजिक शुष्कता की कैद में,
खड़ा है बेचैन सा,
कुछ ढूँढता सा,
जो खोगया है पीछे कहीं,
विकास की गति के,
कदमों की तेज रफ्तार में।
अर्ध विक्षिप्त सा वह ?
भूला हुआ शायद,
जीवन की ऊर्जा के,
उस परम स्रोत को,..
वही मानव जगत के,
असत्य की परछाइयों का पीछा करते हुए,
अंधेरे रास्तों को सच समझ,
भटकते हुए यहाँ वापस जाने का,
अपना सही रास्ता भी भूल जाता है शायद,...।

कहानी

जीवन की बूँदों की,
कहानियों को,
कल जब,
[मैंने]
सहेजकर,
जीवन के,
जीवट पथ पर,
प्रवाहित कर दिया,
गति के आयामों को,
छूकर,चल पड़ीं।
वह सभी कहानियाँ,
जो मृतप्राय सी,
जीवन की खिड़कियों से,
झाँकती सी प्रतीत,
होती थीं,
और जो,
पल-पल निश्चेष्ट सी,
होकर ढूँढती थीं
जीवंत श्वासों को,
और भटक रहीं थीं,
विक्षिप्तता के,
चार पायदानों पर,
"सजी हुई"
नई नवेली
दुल्हन की तरह
अपने ही घर में,
अनजान की तरह,
भुलाई हुई,...
स्वजनों की,
आत्मीयता के शब्दों को,
तरसती,
नितान्त बैचेन सी,.. ।.

वृत्तियां

मन की अतल,
गहराइयों के बीच,
गहन अंधेरी सीढ़ियाँ,
पार करते हुए,
जब मैं पहुंचती हूँ,
निस्तब्ध, नीरव, प्रशांत,
कलरव विहीन,
शून्य से आवृत,
अनेकान्त में।
कुछ बुलबुलों का,
वर्तुलाकार कलरव,
जब मेरे कानों के,
परदों पर हल्का सा,
गूंजता है,.....
और जबरन मुझे,
बाहर की ओर धकेलता है,...
हतप्रभ सी रहजाती हूँ मैं,
क्या है यह ??,....
जो कभी गहरे में भी,
अप्रत्यक्ष रूप,
धारण कर,
मेरे मन की परतों में,
किसी नन्हे कीड़े की तरह,
रेंगता हुआ सा,
अशांत वृत्तियों की ओर,
दौड़ाते हुए (मुझे)
सीमित सी यात्रा पर,
(अचानक)
खींच लेजाता है.....
जहां मैं स्वयं को पाती हूँ,
फिर से,
इसी संसार से घिरा हुआ।
तब,
प्रतीत होता है,.मुझे
मैं हूँ,
चिर आवृत,....?
प्रकृति के स्वरूप में ?
लेकिन ! कब तक,...?

ताम्रपात्र

यह जो मन है..
विषयी होकर,
पदार्थ जगत का पिपासु,
भटकता है जब विषयों के द्वार पर,
किसी याचक की तरह,
भोगवादी लिप्सा से आबद्ध,
आकंठ डूबा,
निमग्न होकर तलाशता है,
रस- आनन्द के,
वह रास्ते, जो ले जाते हैं,
उसे कहीं दूर,
त्यज्य मानव की तरह,
अपने ही उस स्व से,
[वह] हो जाता है दूर।
परित्यक्त मानव है वह,
अविद्या अग्यान के, अन्धकार में उलझा,
मैले, धुमैले पुरातन ताम्रपात्र की तरह,
साकार सा हो गया है, यह मानव।
भूलता सा कुछ,
किन्तु जग की गूढ़ता को,
स्वयं को बिसराना ही मानो हो गया है,
उसका मूल ध्येय।

अहसास

जब मैं होती हूँ,
उत्ताल गरजते सिंधु की,
लहरों के बीच,
अपनी छोटी सी नौका को
तट पर लाने की असीम कोशिश में,
आंतरिक ऊर्जा से,
ओतप्रोत [मैं]
किनारा पाने की,
मेरी अथक चेष्टायें,
मुझे ले जातीं हैं,
और दूर,.....
कहीं गूढ़तम गहरे में,
उसकी खोज में,...।
और तब [मैं] मापना आरम्भ करती हूं,
बैठकर विजित भाव से उस गहरे में ??
और कितना गहरा है ??
अनुत्तरित सी[मैं]
तब निश्चेष्ट होकर सहज समाधिस्थ भाव से,
उन अतल गहराइयों में,
देह से, विदेह, हो जाती हूँ [मैं]

अर्चन

ये जो पूजा है,
माँ और पिता को,
ह्रदय में सतत,
बिठाने की है ....
क्योंकि,
वह मेरे आराध्य हैं।
मेरी पूजा की,
संपन्नता,
पूर्ण तब होती है,
जब वह,
मेरे ह्रदय के,
खुले कपाट में,
सदा मौजूद रहकर,
अपने होने का,
गहरा,
एवं ऊर्जा से समाविष्ट,
अहसास कराते हैं।
क्योंकि,
[मैं]
उनकी ही संरचना,
उनका ही तत्व,
आवृत स्वयं में,
जब स्वयं को,
आगे धकेलती हूँ,
मेरे माँ और पिता,
उस पल,
मेरे ह्रदय के घर में कहीं,
अन्दर गहरे में,
बैठे, (मुझे)
सचेत कर,
आगे बढ़ाने में,
अपनी ही ऊर्जा को,
सुगंध रूप में,
मुझे प्रदान करते हैं।
और मैं,
उस ऊर्जा को पाकर,
आह्लादित,...
ह्रदय कपाट को खोलकर,
पूजा में उनकी ....
सतत, निरंतर,
प्रवाहमान गति से,
भोर से सांझ तक संलीन रहती हूँ।
और जीवन को
गति प्रदान करती हूँ,.....।

ज्ञात से अज्ञात

अकथ, अनादि,
अनंत, सर्वेश्वर,
उमड़ घुमड़,
अन्तस के पट में,
जब गरज गरज,
भर देता, छाले,
ओझल किन्तु,
फिर भी नयनों से,
दृष्टि अपलक,
नित राह देखती,
छालों की पीड़ा में डूबा,
मेरा अन्तस
भीगा-भीगा।
भोर से सांझ हुई,
मग पर ही।
ह्रदय धूल की,
फंकी मारे,
राह जोहते,
रोज निहारे,
नयनों में,
आँसू भर जाते,
ह्रदय बेध कर,
आँसू ढल जाते,
धरती में
समरस हो जाते।
अकथ कहां ?
वर्णित होता है ???
वह अनंत,
भरमाता जग को
या?
जग भ्रमित होता ??
इस भव में।
ज्ञात नहीं,
अज्ञात तत्व को
किस पथ पर,
जाकर ढूँढू मैं,
अतल सीढ़ियाँ,
गहरे में हैं।
नीचे उतरूं
या ??
ऊपर रह जाऊं ?
कठिन प्रश्न हैं,
भव विलुप्ति में,.....।

सत पर चल

जीवन भले ही,
कितना विषमताओं से भरा हो।
मग भले ही तेरा कंटकों से पगा हो।
उठा कदम धीरज भरा
तू आज पथ में,
चला चल अविचल,
मौन साध ले तू इतना,
कि पवन भी पीछा करे,
[तेरा]छोड़ पथ अपना।
अचल रह सत भावों के,
भव सार में न डिगना कभी,
असत भावों के भव- सार में।
डिगायेंगे बुलायेंगे हर क्षण,
तेरे ही भाव तुझको,
न डूबना कभी इसरसीले संसार में,
न रुकना कभी रस-स्वाद के भ्रम में,
रस ही भटकायेंगे पथ से अपने।
रसों में नहीं जीवन का सार है,
विरस हो बढ़ा चल,
तभी जीवन का पार है।
इनकी धार में
[तू] बहना छोड़ दे।।।
आत्म -मुक्ति,भव- मुक्ति,
सहज नहीं हे ! पथिक,
किन्तु कुछ कठिन नहीं,
इस रेत के संसार में।
भर के देख अंजलि में,
रेत के संसार को,
छूटता ज्यों(पल पल)
रेत तेरे हाथ से,
छूटता है ऐसे ही,
ये संसार तेरे हाथ से।
एक रस में सार नहीं ?
दूसरे को क्यों चखे ???
यहीं से खोज ले विरक्ति के द्वार को,
द्वार कहीं दूर नहीं,
भटक कहीं दूर नहीं,
खटखटा दे तू आज,
अपने अन्तस के द्वार को।
खुलेगा ! खुलेगा !
(द्वार)एक दिन खुलेगा।
संसार के रसों को बस
[तू] चखना छोड़ दे।

माँ

माँ मेरी श्वासों में,
भावों में,
स्वप्नों में,
हर क्षण आजाती है।
उसकी स्मृतियाँ,
मुझको नित नूतन कर जाती हैं।
हृदयातल के,
भाव पटल पर,
ऐसे वह छाजाती है।
मातृत्व प्रेम के निर्झर से वह,
मुझको पावन कर जाती है।
उन ऐसे अनमोल क्षणों को,
कहां सहेजूं ???
ठहराऊं ???
वह तो है,पावन गंगा,
मुझे सरस कर जाती है।
ऐसी है मेरी माई
अपने आंचल से ढक जाती है।
ममता का प्याला देकर,
जीवंत मुझे कर जाती है।
हृदय -धाम के पन्नों में वह,
बार बार आजाती है।

मुक्ति

अनुभूतियों की,
अभिव्यक्तियां,
अकाट्य प्रश्नों की,
देहली पर प्रतीक्षा रत हैं
निरंतर ...
पंक्ति बद्ध...
किंतु निरुत्तर,
भीड़ से अलग,
स्व पहचान से परे,
सानिध्य की
उत्कट अभिलाषा में,
पैरों से मापती,
गति की ध्वनि को।।
मानस की गुहा से,
लाती हैं द्वार तक,
प्रदाता न बन कर,
भीड़ में कहीं मुंह ढांपकर,
चाहती हैं देना उन्हें...
नव्यता..
अनजान बनकर,
जन्मों की पीड़ा से,
मुक्ति के द्वार तक...।

रेत की दीवारें

मन के कहीं भीतर से उठते,
खोलते उबलते, बुलबुले.....
कितने असहज ???
ज्ञात नहीं,...
क्यों ???
संयमित हुई दीवारों को
रेत में,
परिवर्तित करने की
असीम कोशिश
करने में लगे हैं
निरंतर,....
प्राप्य को अप्राप्य की
पगडंडी पर भटका कर,
भ्रम के पाश में
बांधकर,
और... छोड़ मुझे
विलुप्त हो जाते हैं
क्षणभर में
जब तक मैं
उन उठते हुए बुलबुलों के
रूप आकार को स्वत: पहचानने की कोशिश में
चेष्टारत होती हूं
अगले ही क्षण वह समाधिस्थ हो...
विलीन हो उठते हैं
धरातल में।।

छवि

बैरागी
मन के आंगन में,
मलय समीर का,
एक झोंका,
झूम झूम कर
गाता आया,
समा गया,
उर के अंतर में
छवि निखरी
फिर,
मन बौराया।।।।

रुपांतरण

आभासित होती,
रुपांतरित भावों,
की नदियां,
भव के किनारों से
नदी की धार में
मुझे,
ले जाकर,.....
गहराई का मापन
जब करवाती हैं
प्रतीत होता है कि,
मेरा स्व,
वास्तव में,
रुपांतरित है अथवा,नहीं
उस अवस्था में
(मैं)स्वयं को
भयकी तराजू में
तोलती नहीं हूं,
अपितु प्रत्याशा स्वरुप
पुनः तैरने की कोशिश कर,
आगे बढ़ जाती हूं।

ऊर्जा

दिनभर सूर्य,
जब देता है जगत को,
ऊर्जा किरणें।,
निःस्वार्थ भाव से,...
नमन में झुकता है,
मेरी ऊर्जा का,
हर एक अणु परमाणु,
जो प्रदत्त है....
उसी के आशीष सम,
मेरे ह्रदय में।....
मेरी हर एक श्वास में,
उसी का वास है.....
जगत की चेतना में,
उसीका हाथ है,...
जड़ और चेतन में,
जीवन के चक्र में,
मेरी गति में,...
अबाध वही है ....
जीवन की लय में,
और प्रलय में,
वह ही गतिमान है,...।

यात्रा

इस जड़ता से,
पिघलने की यात्रा में,
ऊर्जा कणों के साथ
सूछम में समरस होने की,
उसके समीप होने की,
अभिलाष को पूर्ण कर पाती।
भव बन्धनों की कारण,
भौतिक सीढ़ियों के महलों मैं,
कैद करने वाली,
उन घनी कामनाऔं के पुंज को,,..।

क्षण

यह क्षण,
इस क्षण में,
'मैं'
इसी क्षण को
आत्मसात कर पाती,
इसी क्षण में,
(मैं)
पिघल कर
'इसी क्षण'
इसमें प्रवेश कर पाती,..?
इस (मैं) के पिघलने को,
मैं (आत्मतत्व) अनुभूत कर पाती।

वह

वह,

कहां है ??

भटकती पवन से,

जब मैंने भी,

भटकते हुए ही पूछा,..

कांटों से छलनी

विदीर्ण पैरों की पीड़ा को,

नकारते हुए,

तब

वह,

मेरे हृदय में,

श्वास की गति संग,

उतर गया कहीं,

सीढ़ियों को लांघते हुए,

सीमाओं से पार

श्वासों की गहराई से,

अनंत विस्तार में।

पाशविकता

विकृतियों की वृत्तियां,
वर्तुलाकार,
सघन हो,
जब....
मन की दीवारों को घेर लेती हैं,..
पाशविकता का,
नृत्य आरंभ होता है,...
वहीं से,..
ढहने लगते हैं,...
संस्कारों के मकान,
धूल में मिलने के लिए।
युगों तक,
बसंत भी,
आहट नहीं देता,
उस दरवाजे पर
जहां नृत्य में,
पाशविकता के
वस्त्रों को,,...
पुनः पुनः....
धारण किया गया हो.....
मन की विकृतियों के....
शमन हेतु।

जगत

बुलबुलों वाले,
जगत की विवेचना का, दुस्साहस,
जन्म के पश्चात,
शायद,.....
अपूर्ण ही होगा,
क्योंकि ....
मृत्यु सम्मुख,होकर
मुस्कुराती हुई,...
आलिंगन पाश में,
बद्ध करने को
आतुर होगी,
निरंतर,.....
तो भला ????
किस पूर्णता को ?
सत्य ठहराऊं ?
जो बुलबुले की नींव पर,
जाकर रुका .....
ऐसा जगत तो
शायद,...
स्वप्न में ही भला।।

सुमन

रिक्त सूखे जड़वत,
एकाकी उपवन में,
स्वयं का समर्पण,
कर कोई, नन्हा पुष्प,
अपनी पूर्ण चेतना,
एवं अप्रतिम सौन्दर्य के साथ
जब खिल उठता है,....
प्रकृति का यह अनुपम,
अनूठा रहस्यमयी उपहार,
मानव को,
अपनी प्रतीति का,
कोमल अहसास,
प्रदान करता है,
उस प्रस्तुतीकरण में,
समूचे ब्रह्मांड का,
प्रत्येक अणु परमाणु,
उसकी सुगंध के विस्तार,
में नृत्य करता हुआ सा,
प्रकृति के साथ एक,
ताल बद्ध - लय में,
गुनगुनाता है,.....।

विरक्ति

अनुरक्ति से विरक्ति
की यात्रा के मध्य,
दूरियों को मिटाता,
जन्म और मृत्यु का,
अटल सत्य,
मानव को
निश्चेष्ट सा छोड़,
काल की गति की
कहानियों में,
उलझाता,हुआ सा
तीव्र प्रवाह में,
गुजर जाता है,.....
मानव को पीछे छोड़
विरक्ति के द्वार पर,.....

पीड़ा

असीम पीड़ा से आवृत,
आवरण को टटोलती,
"चीखें"
जो गहरे तक उसके प्राण की,
कोर तक जाकर रुक गयीं।
शिराओं में उबलता दर्द,
"विदीर्ण", क्षत विक्षत
खरोंची हुई देह को देखता
समूह।
जो विवेचनाओं में उलझा
अनगिनत प्रश्नों की झड़ियां,
नन्ही अबोध सरल,
"देवियों" के जीवन को,
विकट बनाता,
किसी संवेदनहीन मनुष्य का
"दुष्कृत्य"
परिभाषाऐं भी अधूरी हैं,
नाम भी काल की गति संग,
बिखरा हुआ सा होता है प्रतीत,..
पाप के विस्तार से फैलता,
खौलता ताप, पिघलता समाज,
किन्तु मूकदर्शक।
क्षण भर को,
उनके होंठों पर पीड़ा,
अखबारों में छपी खबरें,
अलमारियों में बन्द होतीं,
धुलती भीगती खबरों का वाचन,
और फिर,....
नन्हीं देवियों को, पूजता समाज,
पुकारता उन्हें कभी आत्मरक्षा में,
क्योंकि,
वह हैं शक्ति का, साक्षात स्वरूप।
फिर क्यों ??....पीड़ा में डूबी,
घर की नन्हीं परियां,
माँ के आंगन की नन्हीं चिड़ियां,.
समाज की विकृति की,
अखंड दीवारों में कैद,
उनकी असह्य पीड़ा, रिसता दर्द,
शायद एक दिन,
धधकता ज्वालामुखी बन,
विकृत सभ्यताओं को,
दफन कर, ठहर जाये,
खामोश सा,...,...

आज की राजनीति

राजनीति का धर्म न कोई,
आज रह गया जीवन में,
इंसान बना है कचरा- पेटी,
सिद्धांत बह गये पानी में।
मौका परस्ती है राजनीति,
आज सामाजिक जीवन में,
नेताओं का धर्म ना कोई,
ना ही कोई जाति है।
ये तो हैं बस धन्धे वाले,
जनता को भ्रम देते हैं,
राजनीति बस धन्धाखोरी,
कीचड़ में ये सब जीते हैं,
और दलदल में धंस जाते हैं,
जीवन इनका नर्क बना है,
नेता बन, दर्प- रूप दिखलाते हैं,...।

रिश्तों की भटकन

रिश्ते सारे दरक रहे हैं
गलियों में वो भटक रहे हैं
इस ऐसी भटकन में वो
गली गली कुछ ढूँढ रहे हैं
थके हुए चेहरे हैं उनके,
हाथ हुए हैं खाली उनके,
द्वार द्वार वो भटक रहे हैं,
सब मूक हुए से मौन हुए से,
भौतिक संसाधन के अर्जन में,
प्रतिभागी सब बन निकले हैं,
जीवन के इस कृष्ण पच्छ में,
शुक्ल पक्छ को खोजरहे हैं,
रिश्तों की वह महक निराली,
खिलता है जिससे बन-माली,
वह भी इतना आहत दिखता,
उपवन के उन पुष्पों को,
पंचतत्व की अगवानी में,
नित्य नव्य सेवा है देता,
स्वप्न किन्तु उसका है बिखरा,
रिश्तों की यह स्वप्न-पिपासा,
रिक्त हुई सी, उसकी आशा,..।

सामीप्य

मन को,
साधने की,
अभीप्सा ने,
पथ की गति को तीव्रतर कर,
"स्व" को
नियोजित कर दिया,
प्रवाह की दिशा में।।
किंतु,,
"भटकाव"
निरंतर,..
पीछा करता रहा,....."मेरा"
"मुझे"
अपने पाश में,
लेने की,, उसकी,
अथक चेष्टाएं,...
जगत की देहली,
लांघने नहीं देतीं,.....
अटूट कोशिशों से....
भर उठती हूं,....
"मैं"
उस अलौकिक के सामीप्य की चाह में,..।

व्यक्तित्व दर्पण

नाम - डॉ. सुकेशिनी दीक्षित

जन्म - 01 जनवरी 1969, जिला आगरा (उ.प्र.)

शिक्षा - एम.ए. हिन्दी, पी.एच.डी., एम.ए. अंग्रेजी,
डिप्लोमा भाषा विज्ञान, एम.ए. दर्शन शास्त्र

ई मेल - sdixit1169@gmail.com

पद - प्रवक्ता -राधा कृष्ण कन्या महाविद्यालय

प्रकाशन - अनेक शोध पत्रिकाओं में आलेख प्रकाशन।
विभिन्न अखबारों में लेख एवं कविताओं का प्रकाशन।
कनाडा से सम्पादित पत्रिका 'प्रयास' में संस्मरण प्रकाशन।
महादेवी वर्मा के साहित्य में उनका व्यक्तित्व .. किताब प्रकाशित।

सम्मान - पी.एच.डी. हेत श्रीमती सरवती देवी गिरधारीलाल सिहाग सम्मान।
विश्व हिन्दी रचनाकार मंच द्वारा नारी सागर सम्मान।
विश्व हिन्दी लेखिका मंच द्वारा नारी रत्न सम्मान।

यदि आप अंग्रेजी में हस्ताक्षर करते हैं तो निवेदन है कि 'हिन्दी में हस्ताक्षर करें', आपकी यह छोटी-सी कोशिश हिन्दी को राजभाषा से राष्ट्रभाषा बनाने में अमूल्य योगदान देगी।

अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

१५, नेहरू चौक, मेन रोड वारासिवनी,
जि. बालाघाट (म.प्र.) पिन ४८१३३१,
संपर्क- ९४२४७६५२५९,
अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com

978-93-86666-04-8

मूल्य- 55/-